वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 69
ISBN 978-93-80353-28-9

एकांकी

(भाग-1)

– रचयित्री –

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

जम्बूद्वीप रचना रजत जयंती महोत्सव–2010 एवं
शांतिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं तीर्थंकरत्रय महामस्तकाभिषेक
महोत्सव (11 से 21 फरवरी 2010) के पावन प्रसंग पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 292943
Website : www.jambudweep.org
E-mail : ravindrajain@jambudweep.org

COURTESY–JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

द्वितीय संस्करण	वीर नि. सं. 2536	मूल्य
1100 प्रतियाँ	फरवरी 2010	16/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती मातीजा

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

-: निर्देशन :-

धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

-: सम्पादक :-

कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण 1984
1100 प्रतियाँ

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

—कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

किसी कवि का कथन है कि–

``The Literature is the mirror of Society."

अर्थात् साहित्य समाज का दर्पण है। प्रत्येक व्यक्ति गतिशील है और नई-नई खोजों में विश्वास करता है। आज बड़े-बड़े पुराण ग्रन्थों को पढ़ने का, चिन्तन-मनन करने का समय पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित भौतिकवादी युग में किसी के पास नहीं है और कदाचित् समय निकालकर पढ़े भी तो शास्त्र-पुराणों की चीज उनकी समझ से परे हो जाती है और वह धर्म से विमुख होते देखे जाते हैं। ऐसे समय में जनसाधारण को आगमसम्मत जानकारी प्रदान कर उनके जीवन का चहुँमुखी विकास करने हेतु रोचक और सरल भाषा के औपन्यासिक शैली में लिखे गये साहित्य महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

जनसाधारण की इसी रुचि को ध्यान में रखते हुए 275 से भी अधिक ग्रन्थों की लेखिका, राष्ट्रगौरव परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने उच्चकोटि के ग्रन्थों के लेखन के साथ-साथ अनेकों लघुकथाएँ, अनेकों लघु उपन्यास, वार्ताएँ एवं रोचक शैली के लघु नाटकों का भी लेखन किया है जिनमें प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में वर्णित महापुरुषों के जीवन की संक्षिप्त झाँकी प्रस्तुत की गयी है, जो अत्यन्त हृदयस्पर्शी और प्रेरणास्पद है।

आज के आधुनिक परिवेश में जनसाधारण को धर्म की ओर उन्मुख करने में यह पुस्तक अनूठी कृति साबित होगी और सभी को एक नई दिशा भी प्रदान करेगी। पाठकगण इस पुस्तक को पढ़कर और कलाप्रेमी इनका मंचन कर अपने जीवन को तो सफल करेंगे और नाटिका को देखने वाले इससे जीवन निर्मापोपयोगी शिक्षा प्राप्त कर अपने जीवन को समुन्नत बनायेंगे, तभी इसकी सार्थकता होगी।

आद्य मिताक्षर

–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

भगवान महावीर के युग में 'चन्दना' एक महासती हुई हैं। महावीर के इतिहास के साथ प्रायः चन्दना का नाम जुड़ा हुआ है क्योंकि चन्दना के द्वारा दिया गया आहारदान एक विशेष ही माहात्म्य को बतला रहा है। कुछ सुधारक लोग तो यहाँ तक कहते सुने जाते हैं कि भगवान महावीर के समय स्त्रियों पर घोर अत्याचार किये जाते थे, उन्हें बाजारों में बेचा जाता था। भगवान ने चन्दना नाम की एक दासी का उद्धार करके यह उदाहरण प्रस्तुत किया है कि शूद्रा और हीन महिला के हाथ से आहार लेने में कोई दोष नहीं है। किन्तु ऐसी बात नहीं है उत्तरपुराण के आधार से इस चंदना के आदर्श जीवन को देखने से 'दासी उद्धार' आदि कल्पनायें निर्मूल हो जाती हैं।

आजकल जो 'चंदनबाला' का नाटक प्रसिद्ध है। प्रायः सर्वत्र दिगम्बर समाज में उसी का प्रचलन हो रहा है। इस पौराणिक इतिहास से उसमें भी कुछ अन्तर है। जैसे कि चालू नाटक में 'सेनापति ने चन्दनबाला के पिता को मारकर उसकी माता के साथ उसका अपहरण कर लिया। माता को अपने वश में करना चाहा किन्तु जब वह वश में नहीं हुई तब उसने माता को भी मार डाला और चन्दना को वश में करना चाहा।' चन्दना के वश में न होने पर उसे किसी वेश्या के हाथ बेच दिया। वेश्या ने किसी सेठ के हाथ बेच दिया। सेठ के यहाँ चन्दना एक बार सेठ के पैर धो रही थी और उसके बिखरे हुए केशों को सेठजी संभाल रहे थे, इत्यादि प्रकरण नाटक में दिखाये जाते हैं जो कि दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के ग्रन्थों से सर्वथा विरुद्ध हैं।

उत्तरपुराण में श्री गुणभद्राचार्य ने 'चंदना' का इतिहास जैसा बताया है उसी के अनुसार यह लघु 'एकांकी नाटक' प्रस्तुत है। 'उस युग में महिलाओं के विक्रय की प्रथा थी' यह एक विचारणीय विषय है। हाँ, इतना अवश्य है कि चन्दना का विक्रय नहीं हुआ था। दूसरी बात यह है कि चन्दना महाराजा चेटक की सुपुत्री थीं और भगवान महावीर की मौसी थीं। वह किसी सेठ के यहाँ रहकर सेठ के पैर अपने हाथों से धोयें यह बात भी असंगत है तथा युवावस्था में सेठ उसके बालों को अपने हाथों से उठा-उठाकर संभालकर ऊपर रखें, यह बात भी निराधार है। पुराण के आधार से तो यही स्पष्ट है कि 'चंदना सेठ को जल पिला

रही थी तब उसके केश कलाप छूट गये और उस समय वह स्वयं अपने दूसरे हाथ से केशों को ऊपर कर रही थी।'

इन सब प्रकरणों को देखकर चन्दना के आदर्श जीवन का परिचय मिलता है तथा जो यह भी किंदवन्ती है कि भगवान महावीर ने वृत्तपरिसंख्यान लिया था कि ''जो सांकल से बंधी हो, रो रही हो, उसी से पड़गना' सो यह भी निराधार ही है। चंदना ने जैसे ही भगवान महावीर का नाम सुना भक्ति से गद्‌गद हो उठ खड़ी हुई। उसी समय उसके शील के माहात्म्य से उसके हाथों-पैरों की साँकल टूट गई। उसके वस्त्राभूषण सुन्दर हो गये और उसके पास में रखा हुआ मिट्टी का सकोरा सोने का पात्र बन गया। देवों के द्वारा पंचाश्चर्य की वर्षा हो गई।

इस नाटक में दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के अनुसार ही सारा कथानक है अतः यही प्रामाणिक है। प्रचलित नाटक को दिगम्बर संप्रदाय से विरुद्ध समझकर उसे छोड़कर इस नाटक का अभिनय कराना चाहिये।

इस नाटक में भगवान महावीर के अभिनय को किसी बालक को लंगोटी पहनाकर नहीं दिखाना चाहिये। कागज या फूस की मूर्ति काम में लेनी चाहिये या मात्र तैलचित्र से काम चलाना चाहिये क्योंकि नाटक में भी मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका का वेश धारण करना वर्जित है तथा दिगम्बरत्व का भी अलाप होता है। अतः मूर्ति या चित्र से ही भगवान महावीर का अभिनय कराना चाहिये।

इस छोटी सी 'एकांकी' नाटिका में तीन लघु नाटक दिये जा रहे हैं। महामन्त्र के प्रभाव से प्रभावित होकर अहिंसा को आराध्य बनाना चाहिये और 'सती चंदना' के नाटक से शीलरत्न और प्रभु भक्ति को अपने जीवन में सर्वोपरि रखना चाहिये। यह नाटकत्रयी आबालगोपाल के लिये आदर्श बने यही मेरी मंगल कामना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

नाटक अथवा रंगमंच की परम्परा अत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है। आदिपुराण आदि प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में तो यहाँ तक वर्णन आया है कि तीर्थंकर भगवान के जन्मकल्याणक में जिनशिशु का पाण्डुकशिला पर अभिषेक करने के पश्चात् इन्द्र ताण्डव नृत्य करता है, पुनः माता-पिता को जिनबालक को सौंपकर 'आनन्द' नामक नाटक दिखाता है।

वस्तुतः प्रत्येक मनुष्य के जीवन को सुसंस्कारित करने में नाटक की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। मात्र मनोरंजन के लिये देखे गये नाटक का प्रभाव आबाल-गोपाल, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष आदि सभी के कोमल मन पर सहज ही पड़ जाता है। जैसे दशहरे के अवसर पर जगह-जगह आयोजित रामलीला व्यक्ति को सच्चरित्र के निर्माण की प्रेरणा प्रदान कर देती है। प्रत्यक्ष उदाहरण के रूप में आज के वैज्ञानिक युग में पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित हर वर्ग और हर अवस्था का व्यक्ति टी.वी. चैनल्स से इस तरह जुड़ा हुआ है कि उनमें दिखाये जाने वाले सीरियल, पिक्चर आदि में वह इतना आत्मसात है कि कहीं न कहीं स्वयं को उससे जुड़ा हुआ पाता महसूस करता है और उनसे अच्छी और बुरी दोनों प्रकार की शिक्षाएँ ग्रहण कर लेता है जो आगे उनके भविष्य निर्माण में भी कहीं न कहीं कारण बनती देखी जाती हैं। वास्तव में आज इससे विशेषकर बच्चों एवं युवावर्ग में धार्मिकता एवं नैतिकता का ह्रास दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। ऐसे विषम समय में प्रेरणास्पद, सच्ची और जीवन निर्माणोपयोगी, शिक्षाप्रद कथाओं को नाटक के माध्यम से प्रस्तुत कर बच्चों और युवकों को संस्कारित करना अत्यावश्यक है क्योंकि बालक और युवा ही उन्नत राष्ट्र की आधारशिला हैं।

जैनागम के महासमुद्र में बहुमूल्य रत्नों के समान महापुरुषों के जीवन से सम्बन्धित ऐसे अनेक रोचक कथानक हैं जिनसे सत्प्रेरणा लेकर हम न सिर्फ अपने जन्म को अपितु आगामी भवों को भी उज्जवल बनाकर अपने उन्नत भविष्य का निर्माण सहज ही कर सकते हैं। वस्तुतः कथा साहित्य की गरिमा का प्रधान कारण मनुष्यों को महापुरुषों के चरित्र से सत्‌शिक्षा प्रदान करना है। जिनधर्म में वर्णित कथाओं का जिन्होंने अध्ययन किया है अथवा नाटक, उपदेश आदि के माध्यम से देखा अथवा सुना है। वह साधारण अथवा काल्पनिक कथाओं,

नाटकों को पढ़-सुनकर मुदित नहीं होते हैं क्योंकि महान, विचारक जैन महर्षियों ने कथाओं के माध्यम से वस्तुतत्त्व का प्रतिपादन किया है। जैनाचार्यों द्वारा प्रणीत दर्शन, ज्ञान, चारित्र से समन्वित उन्हीं कथाओं को आधुनिक और रोचक भाषा शैली में सृजन कर नाटक के माध्यम से प्रस्तुत किया है जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने, जिनको स्वयं ही ''अकलंक-निकलंक'' नाटक देखकर लघुवय में ही वैराग्य हो गया था और उसी वैराग्य के प्रतिफल में आचार्य अकलंक देव के समान अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर जिनधर्म की सेवा में उन्होंने स्वयं को समर्पित कर जो अतुलनीय कार्य किया है। जैन जगत सदैव उनका चिरऋणी रहेगा।

पूज्य माताजी ने अपनी रत्नत्रय साधना से तथा क्षायोपशमिक अद्भुत प्रतिभाशक्ति से विपुल साहित्य की रचना की है, अनेकों तीर्थों का जीर्णोद्धार-विकास करवाया है। अनेक भव्य जीवों को मोक्षमार्ग में अनुरक्त किया है। वस्तुतः आज के वैज्ञानिक युग में परम अहिंसा धर्म–जैनधर्म की महती प्रभावना कर राष्ट्रीय जागृति, मानवमात्र की एकता, साम्प्रदायिक बन्धुता, सर्व सत्त्वेषु समता, विश्वमैत्री की भावना में पूज्य माताजी ने महान योगदान दिया है जिससे अवश्य ही विश्वशांति को सहयोग मिलता है। पूज्य माताजी साक्षात् सरस्वती का ही प्रतिरूप हैं जिनका ज्ञानमय शरीर भारतव्यापी स्वरूप धारण कर चुका है। पूज्य माताजी के कलाप्रेमियों के अतीव आग्रह को स्वीकार कर अनेक लघु नाटिकाओं की रचना की जो विपुल ज्ञानवर्धक वाङ्मय के होते हुए भी जनमानस के लिये विशेष उपयोगी और आकर्षक हैं।

ऐसे ही काव्यों में यह लघु नाटिकाएँ हैं जो ''एकांकी'' के रूप में आपके हाथ में हैं। इन लघु नाटिकाओं का मंचन दर्शकों के चित्त पर अहिंसा, सत्य, अचौर्य आदि सद्गुणों की अमिट छाप छोड़ने में सक्षम होवे और प्राणी मात्र के उन्नत भविष्य का निर्माण कर उसकी आत्मा को परमात्मा बनाने में सफल होवे यही मंगल कामना है।

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी : एक विराट व्यक्तित्व

प्रस्तुति-आर्यिका चंदनामती

अवध प्रान्त की पावन वसुन्धरा ईसवी सन् 1934 को बीसवीं सदी की ब्राह्मी माता पाकर पुनः अपना सौभाग्य सराहने लगी थी, जब शरदपूर्णिमा (आश्विन शु. 15) को जिला बाराबंकी के टिकैतनगर ग्राम में श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जी की धर्मपत्नी मोहिनी देवी की पवित्र कुक्षि से एक कन्या का जन्म हुआ था। जिसका नाम रखा गया–मैना।

रात्रि में 9 बजकर 15 मिनट पर मैना का जन्म होते ही प्रसूतिगृह में एक अनोखा प्रकाश फैल गया था। उसी समय दादी माँ के मुँह से निकल पड़ा था कि कन्या के रूप में मेरे घर में लगता है कोई अवतार आया है।

वैराग्य के अंकुर–बालिका मैना ने अपनी 12-13 वर्ष की उम्र में ही माँ को दहेज में प्राप्त ''पद्मनंदिपंचविंशतिका'' नामक ग्रंथ का गहराई से स्वाध्याय कर लिया, जिससे उनके मन में वैराग्य के दृढ़ संस्कार समा गये और उन्होंने विवाह बंधन अस्वीकार करने का संकल्प कर लिया। पुनः सन् 1952 में शरदपूर्णिमा के ही दिन बाराबंकी में आचार्य श्री देशभूषण महाराज से सप्तम प्रतिमा रूप आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया। सन् 1953 में चैत्र कृष्णा एकम को श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र पर क्षुल्लिका दीक्षा धारण कर ''वीरमती'' नाम प्राप्त किया।

आर्यिका ज्ञानमती–19-20वीं शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज के करकमलों से सन् 1956 में वैशाख वदी दूज को माधोराजपुरा (राज.) में आर्यिका दीक्षा लेकर ज्ञानमती नाम प्राप्त किया।

यथा नाम तथा गुण–गुरुदेव से प्राप्त नाम के अनुसार ''आर्यिका ज्ञानमती जी'' ने अपने जीवन में ज्ञानक्षेत्र में युग का इतिहास ही परिवर्तित कर दिया है। ढाई हजार वर्ष के इतिहास में किसी भी आर्यिका के द्वारा रचित कोई भी साहित्य नहीं प्राप्त होता है किन्तु पूज्य माताजी ने अष्टसहस्री, नियमसार, जैन भारती, ज्ञानामृत आदि छोटे-बड़े लगभग दो सौ ग्रंथों की रचना करके अनेक आर्यिकाओं को साहित्यसृजन का अवसर प्रदान किया है। इनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम आदि पूजा-विधानों ने तो संसार भर में धूम मचा रखी है।

जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका—ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में इनकी पावन प्रेरणा से एक विशाल जम्बूद्वीप रचना का निर्माण खुले मैदान में हुआ है। वह ब्रह्माण्ड का ज्ञान कराने वाली भौगोलिक रचना है, जिसे देखने हेतु प्रतिदिन देश-विदेश से हजारों यात्री हस्तिनापुर पहुँचते हैं।

उत्तरप्रदेश सरकार के पर्यटन विभाग ने जम्बूद्वीप से हस्तिनापुर की पहचान बताते हुए उसे एक अतुलनीय 'मानव निर्मित स्वर्ग' की संज्ञा प्रदान की है। यहाँ निर्मित सभी मंदिर अद्वितीय हैं, जिसमें ''तेरहद्वीप की स्वर्णिम रचना''जैनधर्म पर रिसर्च करने वाले विद्यार्थियों, शोधार्थियों एवं वैज्ञानिकों के लिए शोधपरक एवं अन्वेषणात्मक रचना है।

इसके अतिरिक्त शाश्वत तीर्थ अयोध्या, मांगीतुंगी, अहिच्छत्र, प्रयाग, कुण्डलपुर, राजगृही, पावापुरी, काकंदी आदि अनेकानेक तीर्थों का जीर्णोद्धार एवं विकास, जैनधर्म की प्राचीनता को जन-जन तक पहुँचाने के लिए किए गए महान प्रभावनात्मक कार्य जिनेन्द्र भगवान, जिनशासन एवं जिनवाणी के प्रति उनकी अटूट भक्ति एवं समर्पण के ही प्रतीक हैं।

ज्ञानज्योति का भारत भ्रमण—4 जून 1982 को राजधानी दिल्ली से एक जम्बूद्वीप का मॉडल सुन्दर रथ के ऊपर सजाकर ज्ञानज्योति रथ का प्रवर्तन पूज्य माताजी की प्रेरणा से प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने किया था। पुनः 1045 दिनों तक भारत भ्रमण के पश्चात् 28 अप्रैल 1985 को तत्कालीन रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने हस्तिनापुर में उसकी अखण्ड स्थापना की जो अद्यावधि संसार को ज्ञान का आलोक प्रदान कर रही है।

अयोध्या में महामस्तकाभिषेक की प्रेरणास्रोत—23 अक्टूबर 1992 (धनतेरस) को प्रातःकाल ध्यान करते हुए आपको अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का दर्शन हुआ तथा उनका महामस्तकाभिषेक कराने की भावना जागृत हुई। आखिर अन्तर्प्रेरणा से प्राप्त ध्यान की धारणा ने साकार रूप लिया और एक अनहोना कार्य होनी में परिवर्तित हो गया, जिसके फलस्वरूप 11 फरवरी 1993 को पूज्य माताजी ने अपने संघ सहित अयोध्या की ओर पदविहार किया। लगभग सौ गाँवों में अहिंसा धर्म का अलख जगाती हुई ज्ञानमती माताजी का 16 जून 1993 को भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या में मंगल पदार्पण हुआ। 13 फरवरी से 24 फरवरी 1994 तक वहाँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भगवान ऋषभदेव का महामस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न हुआ।

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा—महाराष्ट्र प्रांत में स्थित मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के ट्रस्ट मंडल के बारम्बार आग्रह पर पूज्य माताजी दक्षिण भारत की लम्बी यात्रा के लिए 27 नवम्बर 1995 को अपने संघ के साथ हस्तिनापुर तीर्थ से मंगल विहार करके उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र इन छह प्रदेशों में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना करके 26 अप्रैल 1996 को मांगीतुंगी पहुँची, वहाँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से 'सहस्रकूट कमल मंदिर' का निर्माण हुआ, जिसमें 1008 जिनप्रतिमा विराजमान हुईं। महाराष्ट्र प्रान्त में यह एक अद्वितीय कमल मंदिर का निर्माण हुआ। पूज्य माताजी की प्रबल प्रेरणा से वहाँ का अनेक वर्षों से रुका पंचकल्याणक कार्यक्रम सानंद सम्पन्न हुआ और सन् 1996 का चातुर्मास भी मांगीतुंगी में ही हुआ। उसी मांगीतुंगी तीर्थ पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से जिनसंस्कृति की अमिट धरोहर के रूप में ''भगवान ऋषभदेव की 108 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा का निर्माणकार्य द्रुतगति से चल रहा है, जो आने वाले समय में जन-जन को जैनधर्म की प्राचीन संस्कृति एवं सर्वोदयी-कल्याणकारी सिद्धान्तों से परिचित करवाएगा।

भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार—मांगीतुंगी से विहार करके महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, हरियाणा होते हुए पूज्य माताजी संघ सहित 30 मार्च 1997 को दिल्ली पहुँची। सन् 1997 का चातुर्मास दिल्ली में हुआ। चातुर्मास के मध्य 4 अक्टूबर से 13 अक्टूबर तक ''चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान'' हुआ, जिसमें भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर तक के चौबीस समवसरणों की रचना, विश्व में अद्वितीय, प्रथम बार हुई। भारत के इतिहास में यह ''जैन महाकुंभ मेला' ही था, जिसमें हजारों लोगों ने भाग लिया और प्रतिदिन लाखों लोग देखने आये।

पुनः 22 मार्च 1998 को ऋषभजयंती के दिन राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान से पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद से भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार का उद्घाटन हुआ और 9 अप्रैल 1998 को महावीर जयंती के दिन माननीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के करकमलों से भारत भ्रमण हेतु समवसरण रथ का प्रवर्तन हुआ। इस समवसरण के प्रभाव से नगर-नगर में अहिंसा, सुख, शांति, समृद्धि एवं मैत्री की स्थापना हुई है। इसी शृँखला में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) से सन् 2003 में ''भगवान महावीर ज्योति'' का विविध प्रान्तों में सफल प्रवर्तन भी इसी शृँखला की विशिष्ट कड़ी है।

जैनधर्म की प्राचीनता तथा 24 तीर्थंकर भगवन्तों के नाम एवं सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए पूज्य माताजी ने समय-समय पर अनेक वृहत् विधानों, महामहोत्सवों, सेमिनारों का आयोजन करवाया। जैन टी.वी., जी.टी.वी., आस्था चैनल आदि के माध्यम से लम्बे समय तक प्रवचन करके जैन-जैनेतर सभी को जैनधर्म के मौलिक सिद्धान्तों से अवगत कराया। इसके अतिरिक्त कितने ही अन्य धर्मप्रभावना के कार्य पूज्य माताजी ने सम्पन्न किए हैं, जिनका यहाँ लेखन तो संभव नहीं है किन्तु आज पूरा समाज उनके कार्य-कलापों से परिचित होकर उन्हें कर्मठता की मूर्ति के रूप में पहचानता है।

आयोजनों के क्रम में ही 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव तीन वर्ष तक नाना आयोजनों के माध्यम से मनाया गया, जिसमें उनकी जन्मभूमि वाराणसी, केवलज्ञान भूमि अहिच्छत्र एवं निर्वाणभूमि सम्मेदशिखरजी के प्रति जैन समाज को तन-मन-धन से समर्पित होने की प्रेरणा प्राप्त हुई। इस मध्य पूज्य माताजी ने सन् 2006 में अपनी आर्यिका दीक्षा के 50 वर्ष पूर्ण किए और भारत की सम्पूर्ण जैन समाज ने उनका ''आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव'' मनाकर इस अतिशयकारी प्राचीन प्रतिमा सदृश गौरवशाली साध्वी को अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित की। पुनः सन् 2008 में शरदपूर्णिमा की पावन तिथि में इनके 75वें जन्मदिवस पर राष्ट्रीय स्तर पर इनका हीरक जयंती महोत्सव मनाया गया।

समय-समय पर माताजी की प्रेरणा से आयोजित अनेक कार्यक्रमों में अनेक राजनेता, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, प्रशासनिक अधिकारी इत्यादि ने पधारकर माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया है, उस क्रम में 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों से हुआ और ''शांति वर्ष'' के रूप में घोषित वर्ष-2009 में विश्वशांति हेतु अनेक अनुष्ठान आयोजित किए गए।

वस्तुतः उनके जीवन का प्रत्येक क्षण इतिहास का एक स्वर्णिम पन्ना है, उनके बारे में कुछ भी कहना सूर्य को दीप दिखाने के सदृश ही है अतः अपने जीवन में ऐसे महान कार्यों की जन्मदात्री, दिव्य शक्तिधारिणी, परम तपस्विनी, चारित्रचन्द्रिका माताजी के चरणों में शत-शत नमन के साथ उनके दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन हेतु मंगलकामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 में हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं–

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है–कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना एवं नवग्रहशांति जिनमंदिर।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।

12. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं शारीरिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खी बावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली

चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों की नामावली

महानुभावों,

अपने नगर के जिनमंदिरों में चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों के नाम निम्नानुसार लिखवाएं एवं इन तीर्थों की यात्रा करके पुण्यलाभ प्राप्त करें।

1. अयोध्या (फैजाबाद-उ.प्र.)	–श्री ऋषभदेव भगवान
	–श्री अजितनाथ भगवान
	–श्री अभिनंदननाथ भगवान
	–श्री सुमतिनाथ भगवान
	–श्री अनंतनाथ भगवान
2. श्रावस्ती (बहराइच-उ.प्र.)	–श्री संभवनाथ भगवान
3. कौशाम्बी (उ.प्र.)	–श्री पद्मप्रभु भगवान
4. वाराणसी (उ.प्र.)	–श्री सुपार्श्वनाथ भगवान
	–श्री पार्श्वनाथ भगवान
5. चन्द्रपुरी (वाराणसी) उ.प्र.	–श्री चन्द्रप्रभु भगवान
6. काकन्दी (देवरिया नि.-गोरखपुर) उ.प्र.	–श्री पुष्पदंतनाथ भगवान
7. भद्रिकापुरी	–श्री शीतलनाथ भगवान
8. सिंहपुरी (सारनाथ) उ.प्र.	–श्री श्रेयांसनाथ भगवान
9. चम्पापुरी (भागलपुर-बिहार)	–श्री वासुपूज्यनाथ भगवान
10. कम्पिलपुरी (फर्रूक्खाबाद-उ.प्र.)	–श्री विमलनाथ भगवान
11. रत्नपुरी (फैजाबाद-उ.प्र.)	–श्री धर्मनाथ भगवान
12. हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.)	–श्री शांतिनाथ भगवान
	–श्री कुन्थुनाथ भगवान
	–श्री अरनाथ भगवान
13. मिथिलापुरी	–श्री मल्लिनाथ भगवान
	–श्री नमिनाथ भगवान
14. राजगृही (नालंदा-बिहार)	–श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान
15. शौरीपुर (बटेश्वर-उ.प्र.)	–श्री नेमिनाथ भगवान
16. कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)	–श्री महावीर भगवान

–निवेदक –

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थंकर जन्मभूमि विकास कमेटी

प्रधान कार्यालय –**जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.,** फोन नं.-01233-280184, 280236

विषय सूची

क्र.सं.	नाटक	पृष्ठ संख्या
1.	महामंत्र का प्रभाव	1
2.	अहिंसा की पूजा	6
3.	सती चंदना	13

भजन

रचयित्री-आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

तर्ज-काली तेरी.....

अहिंसा प्रधान मेरी इण्डिया महान है।
इण्डिया में जन्मे महावीर और राम है।।
यहाँ की पवित्र माटी बनी चन्दन,
उसे करो सब नमन।।

जहाँ कभी बहती थीं दूध की नदियाँ।
वहाँ अब करुणा की माँग करे दुनिया।।
अत्याचार पशुओं पे होगा कब खतम,
उसे करो सब नमन।।1।।

प्रभु महावीर का अमर संदेश है।
लिव एण्ड लेट लिव का दिया उपदेश है।।
मानवों की मानवता की यही पहचान है।
जाने जो पराए को भी निज के समान है।।
तभी अहिंसा का होगा सच्चा पालन,
उसे करो सब नमन।।2।।

अहिंसा के द्वारा ही इण्डिया फ्री हुई।
ब्रिटिश गवर्नमेंट की जब इति श्री हुई।।
चाहे हों पुराण या कुरान सभी कहते,
अहिंसा के पावन सूत्र सब में रहते।
यही मेरे देश की कहानी है पुरानी,
अहिंसक देश प्रेमियों की ये निशानी,
'चंदनामती' यह देश ऋषियों का चमन।
उसे करो सब नमन।।3।।

महामंत्र का प्रभाव

पात्रानुक्रमणिका

धनपाल	उज्जयिनी का राजा
धनदत्त	उज्जयिनी का सेठ
दृढ़सूर्य	चोर
बसंतसेना	वेश्या
वृद्ध	स्वर्ग का देव
मंत्रीगण	
कर्मचारीगण	

(दृढ़सूर्य चोर वेश्या के चंगुल में फंसकर रानी का हार चुराता है और पकड़े जाने पर फाँसी पर लटकाया जाता है। उस समय धनदत्त सेठ से णमोकार मंत्र प्राप्त कर उसे पढ़ते हुए स्वर्ग में देव की पर्याय पा लेता है। इधर धनदत्त पर चोर से मिले हुए होने की आशंका से राजा के द्वारा संकट आने पर देव स्वर्ग से आकर वृद्धरूप लेकर राजा के कर्मचारियों से धनदत्त सेठ की रक्षा करता है। अनन्तर मंत्र के प्रभाव को छोड़कर सभी जैन हो जाते हैं।)

प्रथम दृश्य

समय—रात्रि।

स्थान—वेश्या का महल।

दृढ़सूर्य—प्रिये बसन्तसेने! क्या कारण है मुझसे कोई अपराध हो गया है या तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट है, मुझे शीघ्र ही बतलाओ। तुम इस तरह उन्मनस्कचित्त क्यों सोयी हुई हो ?

वेश्या—प्रियतम! आप जैसे प्रेमी को पाकर मुझे कोई भी कष्ट नहीं है और न आप से कुछ अपराध ही हुआ है किन्तु आज मैंने एक सुन्दर रत्नहार देखा है उसके प्राप्त किये बिना मेरा जीवन किस काम का और आपका प्रेम भी किस काम का ? मैं तो आप को तभी सच्चा प्रेमी समझूँगी जब कि वह हार आप लाकर मेरे गले में पहना दें।

दृढ़सूर्य—प्रिये! बताओ तो सही तुमने किसके गले में वह हार देखा है शीघ्र ही बताओ। अरे! जब मैं तुम्हारे लिए आकाश के तारे तोड़ कर ला सकता हूँ तो फिर किसी के गले के हार को लाना क्या बड़ी बात है ?

वेश्या—आज मैं गांव के बाहर बगीचे में टहल रही थी और वहीं इस उज्जयिनी नगरी के महाराजा धनपाल अपनी महारानी धनवती के साथ बसंतऋतु की शोभा को देखने के लिए पधारे थे। उनकी रानी के गले में बहुकीमती रत्नों का हार था उसने मेरे मन को चुरा लिया। जब तक वह हार नहीं मिलता है तब तक तो मेरा खाना, पीना, सोना सभी छूट गया है मुझे तो आप पहले वह हार लाकर देवें, पुनः बात करें।

दृढ़सूर्य—ठीक है, मैं अभी कुछ ही क्षणों में हार लाकर तुम्हें देता हूँ तुम चिन्ता छोड़ो और तब तक भोजनपान करो।

(चोर चला जाता है)

द्वितीय दृश्य

समय—मध्यान्ह।

स्थान—सघन वृक्षों से घिरा व फाँसी के तख्तों सहित वन।

दृढ़सूर्य—(आर्त स्वर में) सेठ जी! आप बड़े दयालु हैं, धर्मात्मा हैं, आप मेरे ऊपर दया करके पानी पिला दीजिए मुझे बहुत जोरों की प्यास लगी हुई है। देखो तो सही फाँसी पर लटके हुए मुझे इतना समय हो चुका है फिर भी प्राण नहीं निकल रहे हैं। ओह! मुझे मेरे पाप कार्यों का फल इसी भव में ही मिल रहा है और अगले भव में क्या मिलेगा कौन जाने ? यदि मैं नरकों में जाऊँगा तो वहाँ की वेदना, वहाँ के दुःख, वहाँ की मारकाट को कैसे सहन करूँगा ? अरे! मैंने रानी के गले का हार चुराया उसका फल मुझे फाँसी मिली है। सेठ जी! तुम मेरी रक्षा करो।

(रोने लगता है)

धनदत्त—(करुणा से द्रवित होकर) भाई! तुम इस समय बहुत दुःखी हो रहे हो। अहो! इस जगत् में अपने-अपने किये का फल सभी को भोगना पड़ता है। फिर भी मैं इस समय तुम्हारा क्या उपकार करूँ ? कैसे तुम्हें इन दुःखों से छुड़ा दूँ ? (कुछ सोचने लगता है)

दृढ़सूर्य—(गिड़गिड़ाकर) मित्र! मुझे पानी पिला दो मैं बहुत प्यासा हूँ मेरा कण्ठ बिल्कुल सूख गया है। ओह! मुझे इस समय बहुत ही वेदना हो रही है।

धनदत्त—(स्नेह से) अच्छा भाई! मैं तुम्हारे लिये पानी लेने जाता हूँ इसी बीच में मैं तुम्हें एक बात कहूँ, ध्यान से सुनो। मैंने बारह वर्ष तक गुरु के पादमूल में बहुत ही परिश्रम करके एक मंत्र सीखा है जो कि महाफल को देने वाला है जिसके प्रसाद से कोई भी जीव सभी पापों से और सभी दुखों से अपने को छुड़ा सकता है। मैं जब तक पानी लेने जाऊँगा तब तक वह मंत्र यदि भूल गया तो मेरा बारह वर्ष का सभी श्रम व्यर्थ चला जायेगा अतः प्रिय बंधु! मैं तुम्हें वह विद्या बताए देता हूँ तुम तब तक उसको रटते रहो जब तक मैं जल लेकर न आ जाऊँ। आते ही मैं तुम्हें पानी पिलाकर और तुमसे अपना मंत्र वापस लेकर चला जाऊँगा।

दृढ़सूर्य—(घबराते हुए) मित्र! बहुत ठीक, तुम मुझे वह मंत्र जल्दी से जल्दी बता दो और जल्दी ही पानी लाकर पिला दो।

धनदत्त—मित्र सुनो—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।

(सेठ जी बार-बार इसी मंत्र को उससे बुलवाते हैं और पुनः जब वह रटने लगता है तब आप पानी लेने चले जाते हैं। कुछ क्षण बाद ही पानी लेकर आने पर देखते हैं कि वह मर गया है तब वापस चले जाते हैं।)

तृतीय दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—सेठ धनदत्त का मकान

(सेठ के दरवाजे पर एक वृद्ध नौकर लाठी लेकर बैठा है और सिपाहियों से झड़प हो रही है)।

एक सिपाही—(आवेश में) अरे बुड्ढे! तू जल्दी ही रास्ता छोड़ हम लोग सेठ धनदत्त को पकड़ने के लिए आये हुए हैं। तू बीच में ही क्यों अपनी जान गँवा रहा है ?

दूसरा सिपाही—(क्रोध में) अरे! तुझे मालूम नहीं। सेठ जी बहुत बड़े धर्मात्मा बनते हैं, लेकिन बड़े ठग निकले। इन्होंने तो दृढ़सूर्य चोर की चोरी का सारा माल घर में रखकर खूब गुलछर्रे उड़ाए हैं और अब इनके पाप का घड़ा फूट गया है सो भाई अब इन्हें दरबार में उपस्थित होना है।

तीसरा सिपाही—(कड़क कर) हाँ-हाँ बाबा जी! अब तुम जल्दी यहाँ से हटो और अपनी जान बचाओ, अब इस सेठ को राजा के सन्मुख उपस्थित होने दो।

वृद्ध—(उत्साह से) अरे सिपाहियों! तुम लोग यहाँ से भाग जाओ। व्यर्थ ही क्यों बकवास कर रहे हो ? मैं तो सेठ जी का नौकर हूँ, मेरे जीते जी सेठ जी को कौन हाथ लगा सकता है ? तुम सब अपनी शक्ति का घमण्ड रखते हो तो आओ और एक-एक ही क्या सब ही मेरे साथ भिड़ो, मैं अभी क्षणमात्र में तुम सबका काम तमाम कर दूँगा।

(सिपाही लोग भिड़ते हैं और वह बुड्ढा सभी को जमीन पर सुला देता है। धीरे-धीरे राजा के कर्मचारी व मंत्री आदि भी आते हैं अंत में राजा स्वयं तलवार हाथ में लिए हुए आता है और इस बुड्ढे से हारकर अपनी जान बचाकर भागता है तब बुड्ढा बोलता है।)

वृद्ध—(गुस्से में) राजा! तुम कहाँ भागकर जाओगे ? मैं तुम्हें चैन नहीं लेने दूँगा। हाँ, यदि तुम धनदत्त सेठ के पैरों में पड़कर अपने अपराध की क्षमा माँगोगे और प्राणों की भीख मांगोगे तभी तुम्हारी रक्षा होगी। (कहते हुए ही बुड्ढा राजा के पीछे-पीछे दौड़ता है। राजा ऐसा सुनकर सेठ के घर में घुसकर सेठ से क्षमा याचना करता है।)

राजा—सेठ जी! तुम बड़े धर्मात्मा हो, किन्तु मैंने अज्ञानवश तुम्हें बांधने के लिए प्रयत्न किया सो मुझे क्षमा कर दो और मुझे सही-सही बात बताओ कि यह क्या मामला है तथा मेरी रक्षा करो।

सेठ—(शांति से) राजन्! आप आसन पर विराजिए किंचित् भी मत घबराइए, मुझे भी मालूम नहीं है कि यह बुड्ढा कौन है ? अभी सारी स्थिति स्पष्ट हो जावेगी। (वृद्ध की तरफ देखकर) कहिये महोदय! आप कौन हैं? और यहाँ किस हेतु से आये हैं ?

वृद्ध—(देवरूप प्रगट कर साष्टांग नमस्कार करके) महाभाग! मैं वही दृढ़सूर्य चोर का जीव हूँ जिसे आपने पानी पिलाने के लिए पानी लेने हेतु जाते समय महाविद्या दी थी। उसी मंत्र को जपते-जपते मेरे प्राण निकल गये और उस

मंत्र के अमृतस्वरूप जल के पीने से मैं सौधर्म स्वर्ग में देव हो गया। अड़तालीस मिनट के भीतर ही भीतर उत्तम यौवनपूर्ण शरीर को पाकर मैंने आश्चर्यचकित हो विचार किया कि यह उत्तम स्थान क्या है और मैं कौन हूँ ? तत्क्षण ही मैंने सारी स्थिति दिव्य अवधिज्ञान के द्वारा जान ली। मुझे यह भी मालूम हुआ कि मेरे साथ वार्तालाप करने से तुम्हारे ऊपर राजा का प्रकोप हुआ है और तुम्हारे ऊपर संकट आने वाला है। भला मैं ऐसे परमोपकारी महापुरुष के संकट को देख सकता था ? इसीलिए मैं शीघ्र ही यहाँ आया हूँ। मैं आपका सेवक हूँ अब आप मुझे जो भी आज्ञा देवें मैं उसे करने के लिए सहर्ष तैयार हूँ।

धनदत्त—मित्र! अब आप राजा को मारने का उद्यम छोड़ दीजिए। इन्होंने बिना जाने ही ऐसा अपराध किया है।

राजा—(आश्चर्यचकित होकर) ओहो! सेठ जी आप धन्य हैं। आपने मरणासन्न चोर को महामंत्र देकर उसे अनेक पापों के भार से मुक्त कर दिया, उसे दिव्य देवलोक के सुखों का भोक्ता बना दिया। धन्य है यह महामंत्र और धन्य है यह दयामयी जैनधर्म! आज मैं भी इस मंत्र के चमत्कार को देखकर अतिशय प्रभावित हो गया हूँ। अब मैं इस जैनधर्म को स्वीकार करता हूँ।

(इसी बीच में तमाम लोग एकत्रित होकर महामंत्र की जय बोलते हैं और सेठ धनदत्त की जय बोलते हैं पुनः सब मिलकर महामंत्र की महिमा का गीत गाते हैं।)

समाप्त

अहिंसा की पूजा

पात्रानुक्रमणिका

पाकशासन	काशीनरेश
धर्मदत्त	सेठ का पुत्र
यमपाल	चांडाल
मंगी	चांडाल की भार्या
कोतवाल	सिपाही का सरदार
मंत्रीगण	
कर्मचारीगण	
सूरसिंह	
अर्हदत्त	सेठ
जिनदत्त	सेठ
नागरिकगण	

(काशीनगर के राजा ने नन्दीश्वर पर्व में हिंसा न करने का आदेश निकाल दिया। उसी बीच सेठपुत्र धर्मदत्त ने राजा के बगीचे में जाकर चोरी से राजा के ही मेढे को मारकर उसे कच्चा ही खा लिया। माली ने यह घटना रात्रि में अपनी भार्या को सुनाई। गुप्तचर के द्वारा राजा को बात की जानकारी प्राप्त होने पर राजा ने यमपाल चांडाल के द्वारा शूली पर चढ़ाने का हुक्म दिया। चांडाल ने किसी दिन मुनि से चतुर्दशी के दिन हिंसा नहीं करने का नियम ले रखा था अतः उसने इंकार कर दिया, तब राजा ने क्रोधित होकर कोतवाल को आदेश दिया कि धर्मदत्त और यमपाल दोनों को ले जाकर तालाब में डाल दो। तालाब में डालते ही धर्मदत्त को तो मगर ने खा लिया और यमपाल को देवों ने सिंहासन पर बिठाकर उसका अभिषेक करके उसे स्वर्ग के दिव्य वस्त्राभरणों से सम्मानित किया।)

प्रथम दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—चांडाल का घर

(यमपाल दूर से ही कर्मचारियों को आते देख अपनी पत्नी से जल्दी-जल्दी वार्तालाप करता है।)

यमपाल—अरे सुन तो कल्लू की माँ, जल्दी सुन (मंगी इधर देखने लगती है) देख ये सिपाही लोग आ रहे हैं, अब मैं अंदर छिप जाता हूँ। तू इनसे कह देना कि मेरे पति आज कहीं बाहर गये हुए हैं।

मंगी—क्यों ? ऐसा क्यों, आज क्या खास बात आ गई जो मुँह छिपाने की सोच रहे हो ?

यमपाल—अरी तुझे क्या मालूम नहीं! एक दिन मैंने सर्वोषधिऋद्धिधारी मुनिराज के द्वारा अहिंसामयी पवित्र जिनधर्म का उपदेश सुनकर उनके पास प्रतिज्ञा ली थी कि "मैं चतुर्दशी के दिन कभी भी जीव हिंसा नहीं करूँगा" और आज चतुर्दशी है ना। तभी तो मैं निश्चिंत बैठा हूँ। (घबराकर अंदर कोठरी में भागते हुए) हाँ तो देख तू इनसे निपट लेना।

(कर्मचारी दरवाजे पर आकर अंदर झांकते हुए)

सिपाही—अरे ओ यमपाल! ओ यमपाल!

मंगी—जी हाँ! कौन ? अन्दर आ जाओ।

(सभी अन्दर घुस आते हैं)।

सिपाही—अरी ओ मंगी! यमपाल कहाँ है ?

मंगी—अजी, आज ही तो वे बाहर गये हैं, कहिये क्या काम है ?

दूसरा सिपाही—(खेद के साथ) अरे रे, बड़े दुःख की बात है आज उसे बहुत बड़ा लाभ होने वाला था और वह गायब हो गया।

तीसरा सिपाही—(झुंझलाकर) क्या खूब रही, अरे! भाग्यहीनों की यही दशा होती है। (कर्मचारियों से) हूँ चलो, यह तो बेचारा बड़ा बदनसीब निकला।

मंगी—अरे भाई! तुम लोग आये हो तो जरा ठहरो तो सही, थोड़ा पानी वानी पी लो।

पहला सिपाही—अरी, तू यह तो बता कि यमपाल कुछ देर में आ जाएगा क्या ?

मंगी—(रुआंसी होकर) मैं क्या बताऊँ ? वे तो बड़े कर्महीन हैं जब कुछ माल-वाल मिलने का मौका आया तब टल गए। (कुछ सोचकर) भाई! यह तो बताओ आज किसको मारना था ? सरकार का क्या हुकुम था ?

पहला सिपाही—अरे! तुझे क्या मालूम ही नहीं ?

मंगी—नहीं, नहीं! हमें कैसे मालूम होता ?

पहला सिपाही—अच्छा, तू सुन। (मंगी बैठ जाती है) इस समय गाँव में महामारी का प्रकोप चल रहा था सो तू जानती ही है।

मंगी—हाँ हाँ, सो तो मालूम है, चारों तरफ त्राहि-त्राहि मच रही है।

सिपाही—सो महाराज साहब ने "नन्दीश्वर" पर्व के दिनों में आजकल आठ दिन तक काशी शहर भर में हिंसा का निषेध करा दिया था। उन्होंने ढिंढोरा पिटवा दिया था कि जो आठ दिन में जीववध करेगा, उसे प्राणदण्ड दिया जायेगा।

मंगी—(उत्सुकता से) फिर क्या हुआ ?

सिपाही—अरे! फिर क्या हुआ, फिर तो जो अपने यहाँ धर्मात्मा धनदत्त सेठ है ना, सेठ।

मंगी—हाँ, हाँ, मैं उन्हें खूब जानती हूँ।

सिपाही—बस बस, उसी सेठ के लड़के ने गजब कर दिया।

मंगी—क्या किया ?

सिपाही—अरी मंगी! वह राजा के बगीचे में आ गया और खास राजा के ही मेढ़े को मारकर कच्चा ही मांस खा गया।

मंगी—अरे, अरे, बेचारे सेठ तो बड़े सज्जन हैं और उनका लड़का ऐसा ? (आश्चर्य प्रकट करती है) अच्छा! तो यह बात खुली कैसे ?

सिपाही—अरी बहन! राजा ने कोतवाल को भेद का पता लगाने के लिए कड़ा आदेश दिया और तब उसने चारों तरफ गुप्तचर भी दौड़ाए और तभी आज एक गुप्तचर ने आकर यह किस्सा सुनाया। उसने बताया कि रात्रि में बागमाली अपनी औरत से सारी आँखों देखी घटना सुना रहा था। लेकिन बेचारा माली वह तो उस सेठपुत्र से भी तो बहुत डरता है। नहीं तो उसी की नौबत आ जाएगी।

मंगी—तो फिर राजा ने क्या कहा है ?

सिपाही—अरी बहन! राजा ने तो आदेश दिया है कि यमपाल चांडाल को बुलाओ, वह उसे ले जाकर शूली पर चढ़ा दे। देख बहन! आज सेठपुत्र धर्मदत्त के इतने बेशकीमती आभूषण, रत्नों के हार, कड़े, कुण्डल और सुन्दन-सुन्दर वस्त्र उसे मिलते। अरे! (दुःख प्रगट करते हुए) उसकी और तेरी जिंदगी भर की गरीबी खत्म हो जाती।

मंगी—हाय, हाय! (माथा धुनते हुए) मैं बड़े कम्बख्त के पाले पड़ी। मेरे नसीब में जिंदगी पर गरीबी ही देखना है। (घबराती हुई) अरे भाई! वे तो बाहर

चले गए। (अंगुली के इशारे से अंदर की ओर संकेत करते हुए) अरे भाई! वे तो आज ही बाहर चले गए, तुम जब आये तभी तो गये ही हैं, बाहर गये हैं बाहर।

(सिपाही संकेत समझकर अन्दर घुस जाते हैं और उसे पकड़कर बाहर लाते हैं।)

सिपाही—अरे मूरख! तू ऐसी बेवकूफी क्यों कर रहा है ? चल, चल, जल्दी चल। अच्छा हुआ जो तू यहीं था। अरे भाई! आज तेरी गरीबी समाप्त होने वाली है।

यमपाल—(हाथ छुड़ाते हुए) ना ना ना, मैं नहीं चलूँगा। (घबराते हुए) भाई, तुम मुझे छोड़ दो। मैं आज हिंसा नहीं करूँगा।

सिपाही—(आश्चर्यचकित होकर), ऐ! तू तो बड़ा धर्मात्मा बन गया। (व्यंग्य से) हाँ भाई, अब तो अहिंसा देवी को और कहीं जन्म लेने को मिला ही नहीं, तभी तो वह चांडाल के घर आकर पैदा हुई।

दूसरा सिपाही—हाँ, हाँ, खूब रही, जब जैनियों के लड़के जानवरों का कच्चा माँस खाएंगे, तब तो चांडाल ही अहिंसा व्रत की कुशल मनाएंगे।

तीसरा सिपाही—(व्यंग्य से) नहीं तो बेचारी अहिंसा का क्या होगा ? आखिर उसे भी तो अपना ठिकाना ढूँढना पड़ा।

यमपाल—देखो जी! तुम चाहे जो कुछ कहो मैं तो आज किसी को नहीं मारूंगा ? मेरा व्रत है।

सिपाही—अरे देख तो सही, धर्मदत्त के शरीर पर हीरे, माणिक के गहने लदे हैं। रत्नों का हार, हीरे की अंगूठी। भइया! करोड़ों से भी अधिक कीमती आभूषण उसके तुझे अभी-अभी मिल जाएंगे। चल चल, व्रत व्रत को आले में रख दे। बड़ा बना है धर्मात्मा। चल, नहीं तो मैं तुझे जबरदस्ती बांधकर राजा के पास ले चलूँगा।

(सब मिलकर बांध लेते हैं, मंगी खुश होकर नाच उठती है।)

द्वितीय दृश्य

समय—मध्याह्न।

स्थान—राजदरबार।

राजा—मंत्री महोदय! क्या बात है ? अभी तक यमपाल चांडाल नहीं आया। बहुत देर हो गई है। ये कर्मचारीगण कहाँ रुक गये ? क्या बात है ?

मंत्री—महाराज! आते ही होंगे। उसमें बहुत होशियार सूरसिंह है। भला वह समय चूकने वाला है।

(द्वारपाल आता है।)

द्वारपाल—महाराजाधिराज की जय हो! (साष्टांग दंडवत् करता है, फिर हाथ जोड़कर) हुजूर! सिपाही लोग यमपाल को लेकर आये हैं, अंदर आना चाहते हैं।

मंत्री—भेज दो उन्हें।

(सब प्रवेश करके राजा को नमस्कार करके एक तरफ खड़े हो जाते हैं।)

राजा—सूरसिंह! क्या बात है ? कहो, कोतवाल कहाँ है ? (क्रोध में) वे शीघ्र ही इस दुष्ट अधम पापी को यहाँ से ले जाएं, मेरी नजर से इस हिंसक दुरात्मा को जल्दी दूर करें, अरे इस यमपाल को बांध क्यों रखा है ? क्या बात है ?

सिपाही—(हाथ जोड़कर) अन्नदाता! मेरी एक छोटी सी अरदास है, आज्ञा दें तो निवेदन कर दूँ ?

सिपाही—महाराज! इस यमपाल को मैं बड़ी कठिनाई से यहाँ तक लाया हूँ। इसने बड़ी बहानेबाजी की थी। इसकी औरत होशियार थी इसलिए उसने इसे भेजने में संकेत करके मदद किया। यह 'गांव में चले गये' का बहाना करके कोठरी में छिप गया था।

राजा—क्यों ? यह तो बहुत बड़ा आज्ञापालक है, इसने ऐसा अपराध क्यों किया ?

सिपाही—महाराज, इसने कहा कि आज चतुर्दशी के दिन मैं जीववध नहीं करूँगा। मैंने नियम ले रखा है।

राजा—(क्रोध में भड़ककर) अरे इस नीच की इतनी हस्ती। क्यों रे, तू इस धर्मदत्त को ले जाकर शूली पर चढ़ाता है कि नहीं ?

यमपाल—(हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाकर) महाराज, मुझे क्षमा कर दें। आज चतुर्दशी के दिन मैं हिंसा नहीं करूँगा। मैंने महामुनि के पास नियम लिया है।

राजा—(कड़ककर) बस-बस। रहने दे तेरे नियम को। मेरी आज्ञा का पालन करता है या नहीं! बोल जल्दी बोल।

यमपाल—अन्नदाता! आज मैं असमर्थ हूँ।

राजा—तो ठीक है। कोतवाल! इधर आओ, तुम जल्दी से इन दोनों को मेरे सामने से ले जाओ। यह दुष्ट पापी धर्मदत्त और यह यमपाल दोनों महानीच हैं, इन्हें मगरमच्छों से भरे हुए तालाब में डालकर आ जाओ।

कोतवाल—(हाथ जोड़कर) जो आज्ञा महाराज की।

मंत्री—(उठकर) अरे यमपाल! देख तू नाहक में अपने प्राण क्यों गँवाता है। (दुःख के साथ) ओह! बड़े आश्चर्य की बात है। तू देख तो सही तुझे आज धर्मदत्त के कितने बेशकीमती रत्नों के आभूषण मिलेंगे। अरे बेवकूफ! क्या तू भी गोद की छोड़कर पेट की आशा करता है और परोसी थाली को ठोकर मारता है। अरे मूरख! अभी कुछ नहीं बिगड़ा है, महाराज का क्रोध अभी शांत हो जाएगा। तू चल और इसे फाँसी लगा दे।

यमपाल—(दृढ़ता से) मंत्री जी! मेरे प्राण भले ही चले जाएं, मैं अपना नियम नहीं तोड़ूँगा। आज चतुर्दशी के दिन मैं हिंसा नहीं करूँगा। बस मैं आप सभी बड़े महापुरुषों के सामने अधिक नहीं बोल सकता हूँ।

राजा—बस-बस मंत्री जी! इस मूढ़ को अब आगे शिक्षा मत दो, इसकी होनहार अच्छी नहीं है। इसे इस पापी के साथ ही मरने दो। (कोतवाल से) कोतवाल! जल्दी करो इन दोनों को तो ले जाओ।

(कोतवाल दोनों को साथ लेकर जाते हैं।)

तृतीय दृश्य

समय—मध्याह्न के बाद

स्थान—तालाब का

(देवगण तालाब में सिंहासन पर बैठे हुए यमपाल के चारों तरफ खड़े होकर अहिंसा धर्म की जय-जयकार कर रहे हैं और नागरिक लोग उपस्थित होकर चर्चा कर रहे हैं।)

अर्हद्दास—देखो बंधु! जैनधर्म की महिमा अपरम्पार है। धन्य है, यह चांडाल धन्य है, इसने नीचकुल में जन्म लेकर भी आज देवों के द्वारा पूजा को प्राप्त कर लिया है।

जिनदत्त—हाँ मित्र! देखो तो सही, यह धनदत्त सेठ का लड़का धर्मदत्त जैनी होकर भी इस तालाब में मगर के मुख में चला गया।

अर्हदत्त—ओह! बेचारे की कैसी कुमृत्यु हुई। बेचारे सेठजी तो गाँव में मुँह दिखाने लायक भी नहीं रहे।

जिनदत्त—भाई! सन्तान दुर्व्यसनी हो जाये तो माँ-बाप क्या करें ? अरे भाई! देखो तो सही, प्रत्यक्ष में धर्म का फल कैसा होता है ? और पाप का फल

कैसा होता है ? प्रत्यक्ष में देखो। देवगणों ने कितनी भक्ति से यमपाल चांडाल को सिंहासन पर बिठाकर उसका अभिषेक करके उसे कितने सुन्दर स्वर्ग के वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित किया है।

(राजा मंत्रियों और कर्मचारियों के साथ वहाँ आता है)।

राजा—जय हो, अहिंसा धर्म की जय हो। (दुःखी स्वर में) मंत्रिन्! मैंने आज बहुत अन्याय कर डाला। ओह! क्रोध में आकर मैंने कुछ नहीं सोचा। अरे भाई! इस यमपाल ने तो जब मुनि महाराज के पास चतुर्दशी को हिंसा नहीं करने का नियम लिया था तो मैंने व्यर्थ ही बेचारे को सताया। ओह! मेरे द्वारा बड़ा अनर्थ हो गया।

मंत्री—महाराज! अब आप सोच न करें, जो होता है सो अच्छे के लिए होता है। अगर आप इसे तालाब में न डलवाते तो इस समय देवताओं को धर्म के चमत्कार को दिखाने का अवसर कैसे मिलता ? बहुत ही अच्छा हुआ महाराज! आज इस अहिंसा व्रत के प्रभाव को देखकर आपके काशी शहर की कितनी जनता जैनधर्म स्वीकार कर रही है। देखो तो सही महाराज! नागरिकों की भीड़ उमड़ती चली आ रही है। जब एक चांडाल जैसा हिंसक प्राणी भी एक दिन के अहिंसाव्रत से देवों द्वारा पूजा जा सकता है, तब जो हमेशा-हमेशा के लिए हिंसा नहीं करते हैं, मांस नहीं खाते हैं उन्हें कितना उत्तम फल मिलेगा ?

(महाराज यमपाल से क्षमायाचना करते हैं।)

राजा—यमपाल! तू पुण्यशाली है मैंने आवेश में तुझे व्यर्थ ही दण्ड दिया सो क्षमा कर।

(सब लोग उच्च स्वर से अहिंसा का जयघोष करते हैं)।

समाप्त

सती चंदना

पात्र परिचय

पुरुष पात्र

1. विद्याधर राजा
2. वृषभसेन सेठ
3. भीलों का राजा सिंहराज
4. भील
5. मित्रवीर—नौकर
6. उदयनकुमार—राजपुत्र
7. पथिक 3
8. नगरवासी 4-5

स्त्री पात्र

1. चंदना
2. विद्याधरी
3. सहेलियाँ 3-4
4. भील की माता
5. सुभद्रा सेठानी
6. मृगावती रानी
7. दासी
8. श्राविकाएं
9. नागरिक महिलाएं

प्रथम दृश्य

समय—प्रातःकाल

स्थान—रंगभूमि

(सम्मिलित प्रार्थना)

मंगल गीत

जग में शांति सुधा बरसा दो,
महावीर भगवान्!
दुःख शोक का ताप शांत हो!
जन-जन में आनन्द व्याप्त हो!!
जिन वचनामृत को पीकर सब,
करें आत्म अमलान!
जग में.....!!
सबका धर्म अहिंसामय हो!
जन-जन का मन सदा अभय हो!!
सम्यक् शील गुणों को पाकर,
सब होवें गुणवान्!
जग में.....!!

द्वितीय दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—अशोक वन

(कुमारी चंदना बगीचे में अपनी सहेलियों के साथ क्रीड़ा कर रही है। आपस में कुछ चर्चाएं भी हो रही हैं।)

कुसुमा—सखी! तूने कुछ सुना है क्या ? प्रियकारिणी जीजी के सुपुत्र श्री वर्धमान कुमार दिगम्बर मुनि बन गये ?

सरला—(आश्चर्य से) सखी! यह तू क्या कह रही है ? क्या महाराजा सिद्धार्थ के राजमहल में कुछ कमी थी उन्हें ?

विमला—अरे! तुम दोनों को कुछ मालूम ही नहीं, ऐसा लगता है। अपनी सबसे बड़ी जीजी त्रिशला जी हैं। इसलिए तुम चंदना सखी से सारी बातें क्यों न समझ लो।

सरला—तुम्हीं बता दो न, चंदना तो फूल चुनने में लगी हुई है। ऐसा लगता है आज वह अपने किसी इष्टदेव के लिए माला बनाएगी।

चंदना—(हँसकर) हाँ, सखी! तू ठीक कह रही है ? मैं आज इन खिले हुए मालती पुष्पों की माला बनाकर अपने इष्टदेव भगवान् पार्श्वनाथ के चरणों में चढ़ाऊँगी।

कुसुमा—सखी! वर्धमान कुमार ने विवाह क्यों नहीं किया ? राजा जितशत्रु की कन्या यशोदा कितनी सुन्दर और कितनी गुणवती थी ?

चंदना—सखी! तुझे मैंने एक बार बताया था कि वर्धमान कुमार इस युग के अंतिम तीर्थंकर हैं। उनके गर्भ में आने के छह महीने पहले से ही त्रिशला जीजी के आंगन में रत्नों की बरसा हो रही थी। उनके जन्मते ही सौधर्म इन्द्र ने आकर उस नन्हें से शिशु को ले जाकर सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक उत्सव मनाया था। ऐसा माताश्री बताया करती हैं।... जब उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा गया तब उन्होंने ना कर दिया था। अब उनका दीक्षाकल्याणक भी देवों ने मनाया है। उनके हृदय में इन्द्रिय सुखों की इच्छा नहीं थी, यही कारण है कि उन्होंने विवाह नहीं किया। अब वे अपनी आत्मा के अतींद्रिय सुख को प्राप्त करने का पुरुषार्थ कर रहे हैं। वे वन में...।

(चंदना की बातें सभी सखियाँ ध्यान से सुन रही थीं कि इसी बीच एक विद्याधर आकर चंदना को उठाकर भाग जाता है। सब सखियाँ हाहाकार करने लगती हैं।)

तृतीय दृश्य

समय—सायंकाल

स्थान—निर्जन वन

(ऊपर अधर में आमने-सामने दो विमान दिख रहे हैं। अंधेरा हो रहा है। चंदना के विलाप की आवाज सुनाई दे रही है।)

नेपथ्य से –

रानी—(कर्कश स्वर में) अरे दुष्ट! यदि तू अपना जीवन चाहता है तो इस अबोध बालिका को जहाँ से लाया है वहीं पहुँचा दे।...किसी की कन्या के अपहरण का क्या फल मिलता है ? देख! मैं तुझे अभी बताऊँगी।

(कुछ-कुछ प्रकाश दिख रहा है। दोनों विमान चले गये हैं। निर्जन वन में चंदना विलाप कर रही है।)

चंदना—ओह! पिताजी! आप जल्दी आओ, मेरी रक्षा करो। हे मातः! मुझे इस दुष्ट विद्याधर ने कहाँ लाके डाल दिया है ? अब मैं आपसे कैसे मिलूँगी ?... हाय दुर्दैव! तूने यह क्या किया ? मेरे आठों भाई-भावजें मेरी खोज में कितने दुखी हो रहे होंगे ? मेरे अपहरण का समाचार सुनते ही माता-पिता का क्या हाल हुआ होगा ? मेरी प्यारी सखियों! तुम सब मेरे से कितनी दूर हो ?... (दीर्घ निःश्वास लेकर) ओह! अब इस निर्जन जंगल में श्री जिनेन्द्रदेव के सिवाय मेरा कौन है ?

(प्रभात हो गया है। चिड़ियाँ चहचहा रही हैं। चंदना बैठी हुई महामंत्र का जाप कर रही है। उसी समय एक भील आता है। चंदना को देखकर सामने आकर खड़ा हो जाता है और बड़े कौतुक से उसे देखने लगता है। चंदना घबड़ाती है, काँपने लगती है पुनः धैर्यपूर्वक अपने सुन्दर-सुन्दर आभूषण, हार, कंकण, मुद्रिका आदि उतार-उतार कर उसे दे देती है, पुनः उसे उपदेश देती है।)

चंदना—हे बंधु! इस संसार में एक धर्म ही ऐसा है जो इस लोक में धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य और नाना सुखों को देने वाला है तथा परलोक में अच्छी गति में ले जाने वाला है।

भील—वह धर्म क्या है ?

चंदना—भाई! जीवों को नहीं मारना, झूठ नहीं बोलना, चोरी नहीं करना, पराई स्त्री को माता, बहन और पुत्री के समान समझना तथा परिग्रह की अधिक लालसा नहीं रखना यही धर्म है।

(भील आभूषण पाकर खुश हो जाता है और धर्म का उपदेश सुनकर कहता है।)

भील—बहन! तुम यहाँ निर्जन वन में अकेली कैसे रहोगी ? आओ, चलो मेरे साथ, मैं तुम्हें अपने मालिक के घर पहुँचा दूँ।

(चंदना भील के साथ चली जाती है)

चतुर्थ दृश्य

समय—सायंकाल

स्थान—फूस की झोपड़ी

(चंदना एक तरफ बैठी है। भीलों का राजा सिंहराज सामने खड़ा है। उसकी माता एक तरफ से झाँक रही है।)

भीलराज—(गरजते हुए स्वर में) अरी छोकरी! मैं इतनी देर से तुझे प्यार से समझा रहा हूँ। परन्तु तू मेरी बात मानने को तैयार नहीं है। तुझे पता है मैं कौन हूँ ?

चंदना—(साहसपूर्वक) हे भीलराज! तुम चाहे जो कुछ कहो या चाहे जो कुछ कर डालो पर मैं तुम्हें अपने पिता के समान ही समझूँगी।... मैं तुम्हारी कामवासना को पूर्ण करने के लिए कथमपि तैयार नहीं हो सकती।

(भीलराज आगे बढ़कर हाथ पकड़ने की कोशिश करता है, चंदना पीछे हट जाती है।)

भीलराज—मैं जबरदस्ती तेरा उपभोग करूँगा। देखता हूँ तेरी रक्षा करने वाला यहाँ कौन है ?

चंदना—अरे पापी! दूर हट! मुझे हाथ लगाएगा तो तू भस्म हो जाएगा (कड़ककर) तुझे पता नहीं मेरा रक्षक धर्म है वह हमेशा मेरे साथ है।

(इसी बीच सिंहराज की माता सामने आ जाती है और अपने पुत्र को फटकारते हुए कहती है।)

माता—हे पुत्र! तू ऐसा मत कर, यह प्रत्यक्ष देवता है, यदि कुपित हो गई तो पता नहीं कितने सन्ताप, शाप और दुःखों को दे डालेगी ? अतः तू इसकी इच्छा मत कर।

(भीलराज माता की शिक्षा से उसे छोड़कर वहाँ से चला जाता है। तब माता चंदना को गोद में बिठाकर कहती है।)

माता—हे पुत्री! तू चिंता मत कर, मैं तेरी रक्षा करूँगी। तू मेरे पास रह, चल स्नान करके भोजन कर ले। देख, तेरा कोमल फूल के समान चेहरा कैसा मुरझा गया है ?

(चंदना उस भीलमाता की गोद में मुँह छिपाकर जोर-जोर से रोने लगती है। माता उसके सर पर हाथ फेरते हुए उठाती है और अपने साथ ले जाती है।)

पंचम दृश्य

समय—प्रातःकाल

स्थान—जंगल

(एक तरफ झोपड़ी में चंदना बैठी हुई है। बाहर सिंहराज भील घूम रहा है अकस्मात् अपने मित्रवीर नाम के मित्र को आते हुए देखकर प्रसन्न हो जाता है।)

सिंहराज—आओ मित्र आओ! आज बहुत दिन बाद आये हो। कहो! सब ठीक-ठीक है ?

मित्रवीर—हाँ मित्र! सब ठीक है, कहो, आप भी खुश हैं ना ?

सिंहराज—हाँ भाई! यहाँ जंगल में हमें भला दुःख काहे का ? हम तो दिन में शिकार खेलते हैं और रात में खाना-पीना करके सुख से नींद लेते हैं।

मित्रवीर—और फिर आप तो सारे भीलों के राजा हैं तो भला चिंता काहे की ? आपको तो रोज ही कुछ न कुछ चीजें भेंट में मिलती ही रहती होंगी।

सिंहराज—(अट्टहासपूर्वक हँसकर) ह ह ह ह!! तुम ठीक कहते हो।... कुछ दिन पहले एक भील ने हमें एक लड़की लाकर दी थी वह बहुत सुन्दर है।... लेकिन वह मेरे वश में नहीं हो सकी।

मित्रवीर—(आश्चर्य से) अब वह कहाँ है ?

सिंहराज—वह मेरी माता के पास रहती है।... हाँ, मेरी इच्छा है तुम उसे अपने साथ ले जाओ। वह बेचारी यहाँ कब तक रहेगी ?

मित्रवीर—अच्छा मित्र! बहुत अच्छी बात है।

(दोनों झोपड़ी में जाते हैं। भीलराज चंदना से कहता है)

भीलराज—चंदना! तुम इसके साथ चली जाओ। यह बहुत ही भले आदमी हैं। आखिर तुम यहाँ जंगल में कब तक रहोगी।

(चंदना महामंत्र का स्मरण करते हुए चुपचाप मित्रवीर के साथ चलीजाती है।)

छठा दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—मकान की बैठक

(कौशाम्बी नगर में सेठ वृषभसेन अपने मकान की बैठक में बैठे हुए हैं। सामने ही मित्रवीर नौकर हाथ जोड़कर खड़ा हुआ है और चंदना पास में खड़ी है।)

मित्रवीर—सेठ जी! इस भोली बालिका को मैं आपके पास लाया हूँ आप इसका संरक्षण कीजिए।

वृषभसेन—(आश्चर्य से चंदना की तरफ देखते हुए) ओह! यह कन्या तुम्हें कहाँ मिली ?

मित्रवीर—मालिक! मैं कुछ काम से भीमकूट पर्वत के पास एक भीलों की पल्ली में गया था। वहाँ पर जो भीलों का राजा है वह मेरा मित्र है। उसी ने यह कन्या मुझे दी है।

वृषभसेन—(चंदना से) आओ बेटी आओ! तुम मेरे इस घर को अपना ही घर समझो।

(चंदना सेठ के पास आ जाती है और विनय से बैठ जाती है। सेठजी बड़े प्यार से उसके मस्तक पर हाथ फेरते हुए कहते हैं।)

वृषभसेन—पुत्री! तुम किसकी कन्या हो ? वहाँ भीलों के घर कैसे पहुँच गई ? तुम्हें किसने वहाँ ले जाकर छोड़ा था ? कहो...।

(चंदना चुपचाप सिर नीच किये बैठी है तब पुनः सेठजी कहते हैं।)

वृषभसेन—बेटी! अब तुम कुछ चिन्ता मत करो। मैं तुम्हें अपनी पुत्री के समान रखूँगा।

(सेठजी चंदना को साथ लेकर महल के अंदर पहुँचते हैं।)

वृषभसेन—(सेठानी से) सुभद्रे! यह कन्या अपनी बेटी के समान है। देखो, इसे बड़े प्यार से रखो और भोजन कराओ।

सुभद्रा—(चंदना को लेकर) आओ बेटी आओ! तुम यहाँ कैसे आईं ? और कहाँ से आईं ?

(चंदना अपने अंचल से आँसू पोंछने लगती है। सेठानी करुणा से उसका हाथ पकड़कर अपने पास ले लेती है। सेठजी चले जाते हैं।)

सप्तम दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—महल का आंगन

(सेठजी हाथ में गिलास लिये हैं, चंदना एक हाथ से लोटे से पानी दे रही है, सेठजी पी रहे हैं। इसी बीच उसके लम्बे-लम्बे केश नीचे लटक गये तब वह दूसरे हाथ से संभालने लगी। दूसरी तरफ सेठानी दरवाजे से झांक रही है। सेठजी पानी पीकर चले जाते हैं तब सेठानी बड़बड़ाती है।)

सुभद्रा—(क्रोध से भड़ककर) अरी दुष्टे! पापिनी! कुलकलंकिनी! देख, मैं तुझे मजा चखाऊँगी।

(चंदना कुछ न समझकर आश्चर्य से सेठानी की ओर देखती है। सेठानी अंदर चली जाती है और दासी से कहती है।)

सुभद्रा—(दासी से) देखा, अभी तूने देखा ना, कैसा सुन्दर इसका रूप है ?... ओह! इसने सेठजी को अपने सौन्दर्य में कैसे फंसा लिया ?

दासी—(आश्चर्य से) अरे मालकिन! आप क्या कहती हैं ? क्या अपने सेठजी ऐसे हो सकते हैं ?

सुभद्रा—(क्रोध से) मुझे तो पूरी आशंका है।

दासी—बहू जी! थोड़ा शांति रखो। मान लो सेठजी निर्दोष हों तो ? अरे भला इतनी बड़ी उमर के सेठजी इतनी छोटी छोकरी से कैसे फसेंगे ?

सुभद्रा—(क्रोध से कांपते हुए) हाँ हाँ, मैं सब जानती हूँ। (दांत पीसते हुए) अरे! इसका यह रूप भला किसके मन को नहीं लुभाएगा ?

दासी—हूँ! इसकी सुन्दरता तो कमाल की है। मालूम पड़ता है साक्षात् कोई देवकन्या है। फिर यदि सेठजी का मन चलायमान हो जाये तो क्या बड़ी बात है ?

सुभद्रा—(माथे पर हाथ रखकर कुछ सोचते हुए) अच्छा, तू जा और नीचे से लोहे की सांकल उठा ला।

(दासी लोहे की सांकल लेकर आती है। सेठानी एकदम चंदना के पास पहुँचकर बड़बड़ाते हुए उसके हाथ पैरों को सांकलों से बांध देती है और नीचे ले जाकर एक कमरे में डाल देती है। बेचारी चंदना कुछ समझ नहीं पाती है।)

चंदना—(मन में) ओह! यह क्या बला है ? समझ में नहीं आता है कि यह सेठानी इतनी क्रूर क्यों हो रही है ? और मुझे अपशब्द क्यों कह रही है ? भला मैंने क्या अपराध किया है ? ओह!... कर्मों की गति बड़ी विचित्र है। और दुर्दैव! तूने मुझे जंगल से निकालकर महल में रखा है और फिर यहाँ पर इस संकट में कैसे डाल दिया ? अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? किससे अपने दुःख को कहूँ ? हे भगवन! हे तीन लोक के नाथ! आपके सिवाय अब मेरा कौन है ?

(चंदना रो रही है इसी बीच सेठानी आती है, मिट्टी के सकोरे में कोदों का भात लाती है और चंदना के सामने रख देती है।)

सुभद्रा—दुष्टे! ले, खा ले, पापिनी! पता नहीं तू कहाँ से आकर मुझे सता रही है ? मैं तेरी चमड़ी-चमड़ी उधेड़ दूँगी।

(सेठानी एक डंडी से चंदना को मारने दौड़ती है। क्रोध से उसके होंठ कांप रहे हैं। दो चार डण्डे लगा देती है और चली जाती है।)

चंदना—(मन में) बेचारी इस सेठानी का क्या दोष है ? मैंने जो पूर्व में कुछ कर्म संचित किये होंगे उन्हीं का यह फल मुझे भोगने को मिल रहा है। सच है, यह सुभद्रा सेठानी तो निमित्तमात्र है। कर्म सिद्धांत के अनुसार अपने किए हुए कर्मों के सिवाय इस जीव को कोई भी सुख-दुःख देने वाला नहीं है। यदि अन्य कोई ही सुख-दुःख देने में समर्थ हो जाये तो अपने द्वारा अर्जित कर्म व्यर्थ ही हो जाएंगे। अतः अब मेरा यही कर्त्तव्य है कि इन पूर्व संचित कर्मों के फल को शांति से भोगूँ और दुःख, शोक, संताप, आक्रन्दन आदि को छोड़कर श्री जिनेन्द्रदेव का ध्यान करूँ जिससे दुःखों का अंत हो।

(चंदना महामंत्र का स्मरण करती है।)

अष्टम दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—चंदना का कारावास

(लोगों का कोलाहल हो रहा है। कुछ लोग आपस में चर्चा करते हुए चंदना के कारावास के पास से जा रहे हैं।)

पथिक नं.1—अरे भाई! कौशाम्बी नगरी के भाग्य जाग गये। आज यहाँ भगवान् महावीर पारणा के लिए पधारे हैं।

पथिक नं.2—हाँ बंधु! पता नहीं वर्धमान महामुनि को आहार देने का सौभाग्य किसे मिलेगा ?

चंदना—(आश्चर्य से) ऐं! क्या भगवान वर्धमान कौशाम्बी नगरी में आ गये हैं ? (चिंतित मुद्रा में) अहो! मुझे इस कारावास के बंधन में पड़े हुए आज कितने दिन हो गए हैं ? क्या मुझे भी भगवान् के दर्शन हो सकेंगे ? क्या भगवान की चर्या इधर से हो सकेगी ?

(आस-पास में श्रावक-श्राविकाएँ हाथ में झारी, कलश, फल, थाल आदि लेकर पड़गाहन करने के लिए खड़े हुए हैं। उनका कोलाहल हो रहा है।)

श्रावकगण—हे भगवन्! हे महावीर स्वामिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ!

श्राविकाएँ—हे भगवन्! हे वर्धमान महामुने! आइये आइये, यहाँ ठहरिए!

(भगवन् महावीर उसी तरफ आ रहे हैं। चंदना गद्गद हो हाथ जोड़कर आगे बढ़ती है कि अकस्मात् उनके हाथ पैरों की सांकल टूटकर गिर जाती है। उसके सिर पर मालती के फूलों की माला लटकने लगती है, गले में हार, हाथ में कंकण, चूड़ियाँ हो जाती है। साड़ी सुन्दर हो जाती है। उसके शील के प्रभाव से

सारे वस्त्र, आभूषण सुन्दर हो जाते हैं। सामने रखा हुआ मिट्टी का सकोरा सोने का पात्र बन जाता है और उसमें रखा हुआ कोदों का भात शालि-चावल का भात बन जाता है। आसपास में पाटे, चौकी, झारी आदि बर्तन दिखने लगते हैं। चंदना आगे बढ़कर हाथ जोड़कर पड़गाहन करती है।

(ऐसे समय में पहले कुछ अंधकार दिखाना चाहिए जिससे सारी चीजें वहाँ एकत्रित करने में और चंदना को अलंकृत करने में सुविधा रहे, पुनः प्रकाश दिखाना चाहिए।)

चंदना—(गद्‌गद स्वर से) हे भगवन्! हे वर्धमान जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ! हे प्रभो! यहाँ आओ आओ, ठहरो ठहरो!

(भगवान महावीर खड़े हो जाते हैं। चंदना बारम्बार नमस्कार करते हुए तीन प्रदक्षिणाएँ देती हैं।)

चंदना—हे स्वामिन्! उच्च स्थान पर विराजिए।

(भगवान् विराजमान हो जाते हैं, चंदना पाद प्रक्षालन, पूजन और नमस्कार करके प्रार्थना करती है।)

चंदना—हे नाथ! मेरा मन शुद्ध है, वचन शुद्ध है, काय शुद्ध है और यह अन्न-जल भी शुद्ध है। आप कृपाकर आहार स्वीकार कीजिए।

(चंदना भगवान् को आहार दे रही है। इधर जनता की भीड़ उमड़ती चली आ रही है। उधर आकाश से देवगण पंचाश्चर्य वृष्टि कर रहे हैं। पंचरंगी रत्न बरस रहे हैं, सुगंधित पुष्प बरस रहे हैं, मंद सुगंध पवन चल रही है। दुंदुभि बाजे बज रहे हैं और 'जय हो, जय हो, अहो दानं, अहो पुण्यं, सती चंदना धन्य हो, धन्य हो, भगवान् महावीर की जय हो, जय हो, जय हो।' इस प्रकार से देवगण जयजयकार लगा रहे हैं। उनके साथ उपस्थित सभी नर-नारी भी जय-जयकार लगा रहे हैं।

इसी बीच में रानी मृगावती भी अपने पुत्र को साथ में लेकर वहाँ आ जाती है। भगवान् महावीर आहार लेकर चले जाते हैं। तब मृगावती चंदना के पास आ जाती है।)

मृगावती—(आश्चर्य से) अरे मेरी प्यारी बहन चंदने! तू यहाँ कैसे ? (दौड़कर चंदना को छाती से चिपकाते हुए) चंदना! तेरे अपहरण के बाद हम लोग कितने दुःखी थे ? आज तू बड़े भाग्य से हमें मिली है।

चंदना—जीजी! हमें इस कौशाम्बी नगरी में रहते हुए आज कई महीने व्यतीत हो गये हैं।

मृगावती—चंदना! बता तो सही, तुझे किस दुष्ट पापी ने हरा था ? और उसके चंगुल से तू कैसे छूटी है ?

चंदना—जीजी! एक विद्याधर ने मेरा अपहरण किया, पुनः अपनी स्त्री के डर से उसने मुझे अपने विमान से नीचे गिरा दिया, वहाँ पर एक भील मुझे अपने साथ ले गया और अपने स्वामी को सौंप दिया। उसने मेरा शीलभंग करना चाहा, किन्तु जब मैं दृढ़ रही तब उसकी माता ने मेरी रक्षा की। पश्चात् उस भिल्लराज ने मुझे अपने मित्र को सौंप दिया। उसने यहाँ लाकर मुझे सेठ वृषभसेन को दे दिया। सेठ सेठानी ने मुझे पुत्रीवत् संभाला। अनन्तर पता नहीं मेरे किस जन्म के अर्जित कर्म का उदय हो गया कि सेठानी ने मुझे सांकलों से बांधकर यहाँ डाल रखा था।... आज पुण्योदय से भगवान् महावीर के दर्शन हुए हैं।... (इतना सुनते ही मृगावती रोने लगती है और पुनः-पुनः चंदना के सिर पर हाथ फिराते हुए कहती है।)

मृगावती—बहन चंदना! तूने इतनी छोटी सी उमर में कितने दुःख सहे हैं ? ओह! विधि की विडम्बना को धिक्कार हो। अहो! इस मूढ़ सेठानी ने तुझ जैसी पवित्र बालिका को क्यों कष्ट दे रखा था ? और तूने मुझे कुछ समाचार क्यों नहीं दिलाया ?

चंदना—जीजी! बेचारी सेठानी का क्या दोष है ? मैंने ही किसी जन्म में अशुभ कर्म बांधे होंगे, उन्हीं का फल यहाँ मुझे भोगना पड़ा है।

मृगावती—ओह! तू इतनी कोमल सुकुमार कन्या, तेरी यह छोटी सी अवस्था! तूने माता-पिता आदि कुटुम्बियों का वियोग कैसे सहा ?

(मृगावती बार-बार चंदना को छाती से लगा रही है और उसके सिर पर हाथ फेर रही है। दूर से सेठ-सेठानी देख रहे हैं और काँप रहे हैं। इधर चंदना रत्नों का ढेर उठा उठाकर लोगों को बांट रही है और बहुत से रत्न सुरक्षित अपने रहने के स्थान में रख रही है।)

मृगावती—चलो बहन चलो! अब मेरे साथ चलो।

(चंदना बहन के साथ चली जाती है। लोग चंदना के बारे में चर्चा कर रहे हैं।)

श्रावक नं.1—यह सुकुमारी चंदना क्या महारानी मृगावती की बहन थी?

श्रावक नं.2—भाई! उसका चेहरा ही देखो, महारानी के चेहरे से मिलता-जुलता था।

श्राविका नं.1—तो क्या यह चंदना वैशाली के राजा चेटक की पुत्री है ?

श्राविका नं.2—हाँ, बहन! कुछ दिन पूर्व मैंने सुना था कि राजा चेटक की सबसे छोटी पुत्री चंदना को कोई दुष्ट उठाकर ले गया है।

श्राविका नं.3—हाँ, हाँ! उस समय राजा चेटक के कुछ आदमी यहाँ भी तो खोजने के लिए आए हुए थे।

श्रावक नं.1—हाँ हाँ, उस समय अपने यहाँ के महाराज शतानीक ने भी तो जगह-जगह अपने कर्मचारियों को खोजने के लिए भेजा था किन्तु कहीं पर भी कुछ पता नहीं चला पाया था।

श्रावक नं.2—देखो तो सही, कितने महीने से यह यहाँ सेठ वृषभसेन के महल में रह रही थी किन्तु किसी को कुछ पता ही नहीं चला।

श्राविका नं.1—चलो अच्छा हुआ, आज उसके भाग्य जाग गए।

श्राविका नं.2—और उसके निमित्त से कौशाम्बी नगरी के भी भाग्य जाग गये।

श्राविका नं.1—हाँ बहन! हम लोगों के भी भाग्य जग गये, देखो ना तीर्थंकर महावीर के दर्शन मिल गये।

श्राविका नं. 2—और उनका आहार देखने का भी पुण्य अवसर मिल गया।

श्रावकगण—सचमुच में हम लोग बहुत ही भाग्यशाली हैं जो कि आज वर्धमान भगवान् के दर्शन का अवसर मिला है।

नवम दृश्य

समय—मध्याह्न

स्थान—राजमहल

(रानी मृगावती सिंहासन पर बैठी हुई है। पास में एक आसन पर चंदना बैठी हुई हैं। सामने सेठ-सेठानी हाथ जोड़े खड़े हैं।)

वृषभसेन—(हाथ जोड़कर कांपते स्वर में) महारानी जी! मेरा अपराध क्षमा कर दो।

सुभद्रा—(आँसू पोछते हुए) महारानी जी! मैं आपकी शरण में आई हूँ, मेरी रक्षा करो।

मृगावती—यद्यपि तुम दोनों ने घोर अपराध किया है फिर भी...। (बीच में बोलते हुए)

वृषभसेन—हे मातः! आप दयालु हैं हम दोनों पर दया कीजिए।

मृगावती—(करुणा से) अच्छा, तो... तुम दोनों ही चंदना के चरणों की शरण लेवो यह जैसा कहेंगी वैसा ही होगा।

(दोनों ही चंदना के चरणों में गिर पड़ते हैं।)

वृषभसेन-सुभद्रा—(गिड़गिड़ाते स्वर से) हे देवि! पवित्रमूर्ति! हमारे अपराध क्षमा करो, हमें जीवनदान देओ।

सुभद्रा—हे शील शिरोमणि! मैंने आपको न पहचान कर ही यह अनर्थ कर डाला है, अब आपको समझा है कि आप साधारण कन्या नहीं प्रत्युत् महासती हैं, मनुष्य नहीं साक्षात देवता ही हैं।

चंदना—(करुणा से) हे मातः! मेरे हृदय में आपके प्रति किंचित् भी क्रोध नहीं है। वास्तव में आपका क्या दोष है ? मैंने पूर्व भव में जो कुछ अशुभ कर्म संचित किये होंगे उसी का फल मुझे भोगना पड़ा है।

सुभद्रा—(प्रसन्न होकर) धन्य हो, धन्य हो, हे चंदने! आप साक्षात् क्षमा की मूर्ति ही हो।

वृषभसेन—हे चंदने! हे पुण्यमूर्ति! मेरे घर में रहते हुए अकारण ही आपको जो कष्ट भोगना पड़ा है उसका मुझे बड़ा पश्चात्ताप है।

चंदना—हे तात्! आप मेरे धर्मपिता हैं, आपने तो बहुत बड़े संकट के समय मेरा संरक्षण किया है और फिर जो भी कष्ट मुझे मिला है वह सब आपके बिना जाने ही हुआ है। भला आपको इसका अफसोस क्यों ?

सुभद्रा—सारे कष्टों को देने वाली तो मैं ही हूँ।

चंदना—मातः! आप तो निमित्त मात्र हैं। आप भला हमें दुःख कैसे दे सकती थी ? अरे! यदि अन्य ही कोई अन्य किसी को सुख-दुःख देने लग जाएँ तो अपने किए हुए कर्म व्यर्थ ही हो जाएँ ? अतः मेरे कर्मों ने ही मुझे दुःख दिया था न कि आपने! अब आप दोनों के प्रति मेरा पूर्णतया क्षमाभाव है अतः आप लोग शांति धारण कीजिए।

(मृगावती से) जीजी! आप इन्हें राजा की तरफ से अभयदान दिला दीजिए।

मृगावती—(प्रसन्न होकर) ठीक है, चंदना! जैसा तुम कहोगी वैसा ही होगा। इन्हें किसी प्रकार का दण्ड नहीं दिया जाएगा।

वृषभसेन-सुभद्रा—(गद्गद होकर) धन्य हो, महासती चंदना। धन्य हो! आप दया की अवतार हो। आपके गुणों का देवगण मिलकर भी बखान नहीं कर सकते हैं। आप अगणित गुणों की भण्डार हो। हे महारानी जी! आपको माता त्रिशलादेवी और चंदना की बहन होने का सौभाग्य मिला है अतः आप भी महाभाग्यशालिनी हैं।

(दोनों बार-बार चंदना को और मृगावती को प्रणाम करते हैं और उनसे अभयदान प्राप्त कर चले जाते हैं।)